International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 6 No. 40 September - October - 2025

झारखंडी आदिवासी कविताओं में प्रकृति के विभिन्न रूप

डॉ. दिलीप गिन्हे[1], डॉ. साळुंके कुशाबा अभिमन्यू[2]
[1]*सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,*
नवगण कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय, परली वैजनाथ जि.बीड (महाराष्ट्र)
[2]*सहायक प्राध्यापक, इंग्लिश विभाग,*
कला व विज्ञान महाविद्यालय चौसाळा, जि. बीड
Corresponding Author – डॉ. दिलीप गिन्हे
DOI - 10.5281/zenodo.17656921

प्रस्तावना:

झारखंड का भौगोलिक परिवेश प्राकृतिक सौदर्यं से भरा हुआ है। इस प्रदेश में नदी, झरने, पहाड़, पेड़-पौधें एवं वन्यजीवों की खूबसूरती अलग से अंदाज में मिलती है। यहाँ पर पर्यटक इसी खूबी के कारण आते हैं। यहाँ पर कई जलप्रपात, बड़ी-बड़ी झीलें एवं जंगल सौदर्य दिखाई देता है। कई ऐसे गाँव हैं जहाँ पर झारखंडी अस्मिता का नजरा देखने को मिलता है। सरकार ने कई स्थलों को भारतीय पुरातत्त्व विभाग को सौप दिया है। इन सभी प्राकृतिक सौदर्यं के घटकों को वहां के आदिवासी कवियों ने बड़ी ही बखूबी से रेखांकित हैं। वे इस प्राकृतिक सौदर्यं में आनंद एवं दुःख की कई संवेदनशीलता को साँझा करना चाहते हैं। प्रस्तुत शोध आलेख में सरितासिंह बड़ाईक की 'सावन', निर्मला पुतुल की 'बाँस', वंदना टेटे की 'कविताओं वाली नदी' एवं रामदयाल मुंडा की 'अगर तुम पेड़ होते' जैसे प्रतिनिधिक कविताओं को ही समाविष्ट किया गया है। इन कवियों ने प्रकृति के विविध रूपों को केंद्र में रखकर कविताएँ लिखी हैं। उन सभी प्राकृतिक रूपों की विशेषताओं को प्रस्तुत शोध आलेख में विश्लेषित किया गया है।

महत्वपूर्ण शब्द: प्रकृति के विभिन्न रूप, सावन महीने का महत्त्व, कविताओं वाली नदी, बाँस, पेड़ की उपादेयता।

सरिता बड़ाईक की 'सावन' कविता बहुत ही सुंदर तरीके से प्राकृतिक विविध उपादानों का चित्रण करने में सक्षम रही है-

सावन:

"घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है
सावन के सिंगार का बीड़ा
खेत सज़ा है
चारों ओर
मांदर थाप पर
मन मेरा थिरकत है
घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है
नदी-नाला पोखर तलैया
रोपा-खेत डमकत-झूमर

छोरे चले कुमनी घर कर
मछली मारे
खोंसे कांसी-फूल जुड़े में
छोरी महकत है
घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है
सुनसान है घर खेत में मेला
सावन में चलता कीच-हवा खेला
इन्द्रदेव मुस्काते ऊपर से
कीचड़ में बच्चे फुदकत है।
घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है
हवा के जोर पेड़ओं पौधे
झुक-झुक चूम रहे हैं धरती
उड़ता देख सजनी का आँचल
जेठ, जेठानी को धंसकत है
घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है
मस्त-मगन बदरा हो
जन-जन बौराए
मन की ख़ुशी कैसे बतलाएं
घर-घर नव रूप बिजुरिया चमकत है
घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है
प्रकृति-मानुस का देख मिलन
अकल हुई बेहाल
संतोष से जीना ही जीना है
बात बूझ कर
मोरा अंग-अंग फरकत है
घड़ी-घड़ी बदरा गरजत है
बरखा जम कर बरसत है"1

-सरितासिंह बड़ाईक

नागपुरी भाषा की कवयीत्री सरितासिंह बड़ाईक ने 'नन्हीं नहीं'आशा अपेक्षाओं को चित्रित करने के लिए 'नन्हे सपनों का सुख' काव्य संग्रह लिखा। इस काव्य संग्रह में प्रकृति के गोद में खिलती हुई अनेक कविताएँ मिलती हैं। इसी कड़ी में हम इस पोस्ट के माध्यम से उनकी 'सावन' कविता में आये विविध प्राकृतिक रूपों को विश्लेषित करेंगे। सावन महिना आने के बाद एक गाँव में, एक परिवार में, एक क्षेत्र में किस प्रकार का माहौल रहता है। इसका सुंदर ऐसा चित्रण सरिता अपनी कविता सावन में कराती है। सावन महीने में प्रकृति का रंग, रूप और आकार सुनहरा सा होता है। घड़ी-घड़ी में बादल गरजकर जमकर बरसते हैं। चारों ओर खेत-खलिहान हरे-भरे हो जाते हैं।

नदी-नाले लबालब भरकर बहने लगते हैं। हवा के झोकों से पेड़-पौधे नाचने लगते हैं। इसी मौसम में मन की स्थिति कुछ अलग ही आनंद देकर जाती है। प्रकृति के विविध रूप, रंग और आकार भी हमें अलग अलग दिखाई देता है। गाँव-गाँव में छोटे-छोटे मेले भरे हुए दिखाई देते हैं। उस में में हर एक मनुष्य ख़ुशी से झूम उठता है। हवा का भी एक अलग-सा रूप दिखाई देता है और जो बिजली गरजकर बारिश करवाते हैं। वे इंद्र देव के चहरे पर भी ख़ुशी दिखती है। जो कमल कीचड़ में अपना जीवन जी रहे हैं, वे भी अपने आप में ख़ुशी से झूम उठे हैं। हवा के झोकें से प्रकृति के पेड़-पौधे झूम रहे हैं। पशु-पक्षिओं की चिलकारी चारों ओर घूमती नजर आ रही है। हर एक परिवार की जेठ-जेठानी भी इस मौसम का आनंद ले रही हैं। वे अपने-आप में बहुत खुश है और प्रेमिकाओं ने भी कुशी जताई है, वे भी सज-धजकर इस मौसम में नाचने-गाने का आनंद ले रही है। बिजुरिया भी मस्त मगन होकर चमकती दिखाई देती है। इस प्रकार से प्रकृति का हर एक मनुष्य अपने-आप के मिलन के लिए तैयार है। मोर भी अपना पिसारा

फराक्ता हुआ दिखता है। इसी प्रकार से झारखंड की आदिवासी कवयित्री वंदना टेटे भी अपनी कविता 'कविताओं वाली नदी' प्रकृति की संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करती है-

कविताओं वाली नदी:

"अब भी कभी
मन चाहता है
कविताओं की नदियों में डूबती-उतरती
गोते लगाऊं
पहाड़ों की ढलान पर
गाती हुई उतरूं
जटंगी के खेतों में
पीली फ्रॉक पहने
छुप जाऊं
और दादा से कहूं -
ढूंढो मुझे।
पके जामुन से रंग लेकर
जब बादल पहाड़ों से
सहिया जोड़ने चलें
तो उन्हें गले मिलते देखूं।
पर कैसे करूं
मैं पूरी अपनी चाहना ?
कविताओं वाली नदी
सूखने लगी है
गीतों के पहाड़
उजाड़ हैं
जंटगी के खेतों में
हिंडालको की माइंस खुदी हैं।
सूख गए हैं पोखरे
बादल पहाड़ों से
आंख चुरा रहे हैं
और जंगल से गुजरती हवा
गुनगुनाना गुदगुदाना भूल गई है।
बस फुसफुसाती हुई
न जाने क्या कहती है
कि मन अंदेशे से भरे
दह में डूबता उतरता है।
और कविताओं की नदियों में
डूबने की इच्छा
बंदूक की बटों
और बूटों के नीचे
कराहती रहती है
दिन-राता"2

- वंदना टेटे

झारखंड की आदिवासी कवयित्री वंदना टेटे ने आदिवासी कविता में अपनी पहचान कायम रखी है। वे हिंदी एवं खड़िया भाषा में अपना काव्य लेखन करती है। उन्होंने 'कोनजोगा' संग्रह के माध्यम से झारखंड के प्राकृतिक सौदर्य का चित्रण करने का प्रयास किया है। वे 'कविताओं वाली नदी' में अपनी प्राकृतिक संवेदनशीलता को दर्शाती है। वह इसमें 'बचपना' प्रवृति को भी व्यक्त करती है। वे कहती है कि वह कविताओं वाली नदी में अब भी और कभी भी गोते लगाना चाहती है। यानि की प्राकृतिक सानिध्य में या जिस भी परिवेश में नदी-नाले बहते रहते हैं। उस नदी-नालों में कवयित्री गोते लगाकर आनंद लेना चाहती है। प्रकृति के गोद में जितने भी बड़े-बड़े पहाड़ पर्वत हैं उन सभी पर गीतों को गाकर मन प्रसन्न करना चाहती है। और प्रकृति के इर्दगिर्द सभी खेत-खलिहानों में वह पिला रंग का फ्रोक पहनकर अपने दादा से चुपके से कहना चाहती है कि वह अब मुझे ढूंडो! हम देखते हैं कि बारिश के दिन शुरू होने से पहले जामुन के पकने का मौसम रहता है। इस मौसम को भी कवि ने नहीं छोड़ा। वे कहती है जामुन

पकने के पहले जब जामुन रंग बदलते हैं, तो बादल भी अपना रंग काला करते हैं। यानि वह भी अपना रंग बदलते हैं। 'जामुन और बादल' के रंग को वह 'कविताओं वाली नदी' के परिवेश में खोजती है। लेकिन आज मनुष्य ने जैसे-जैसे प्राकृतिक संपदा को तहस-नहस करना शुरू कर दिया है। तब से 'कविताओं वाली नदी' भी सूखने लगी है। उसने बहन कम कर दिया है। यानि कि पृथ्वी से जब पेड़-पौधे कम होते गए, तब-तब प्राकृतिक परिवर्तन देखने को मिले। उसमें 'कविताओं वाली नदी' भी सूखी हुई दिखाई देती है।

बड़े-बड़े पहाड़ों ने बड़ी-बड़ी सडकों की जगह ले ली और उसमें कविताओं वाली नदी के सानिध्य में जो भी गीतों का गायन होता था वह भी सूखा पड़ा मिलने लगा है। और यह सब देखकर बादल भी अपने आँख छुपाते हुए मिल रहे हैं। जो हवा पेड़ -पौधों के कारण गीतों को गुनगुनाने लगती थी। वहीं हवा आज हमें भी शांत हुई दिखती है। जब से कविताओं वाली नदी पर आक्रमण होते गए है। तब से न जाने क्या क्या परिवर्तन हुए जिसके चलते प्राकृतिक संपदा खत्म होती गई है। अब इस कविताओं वाली नदी के नीचे कवि को 'बारूद और बन्दूक' चलने की आवाज़ नज़र आ रही है। इस प्रकार से संताली कवयित्री निर्मला पुतुल ने अपनी कविता 'बाँस' के माध्यम से उसकी कई उपादेयता पर प्रकाश डाला है-

बाँस:

"बाँस कहाँ नहीं होता है
जंगल हो या पहाड़
हर जगह दिखता है बाँस
बाँस जो कभी छप्पर में लगता है तो कभी
तंबू का खूँटा बनता है
कभी बाँसुरी बनती है, तो कभी डन्डा
सूप-डलिया हो या पंखा
सब बाँस का उपयोग होता है।
बाँस की खासियत भी अजीब है
जो बिना खाद-पानी के भी बढ़ जाता है
उसकी कोई देखभाल नहीं करनी पड़ती है
बस जहाँ लगा दो लग जाता है
पर बुजुर्गों का कहना है कि
कुंवारे लड़के-लड़कियों को इसे नहीं लगाना
चाहिए
नहीं तो हमेशा बाँझ ही रह जाएँगे
बाँस जहाँ भी होता है
अपनी ऊँचाई का एहसास कराता है
जहाँ अन्य पेड़ बौने पड़ जाते हैं
बाँस को लेकर कई धारणाएँ हैं
आदिवासियों के कुछ और गैर-आदिवासियों के
कुछ
चूंकि बाँस का संबंध आदिवासियों की धारणा
सबसे महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय है
बाँस को लेकर कई मुहावरें हैं
जिसमें एक मुहावरा किसी को बाँस करना है
जो इन दिनों सर्वाधिक चर्चित मुहावरा है
अब इस बाँस करना में कई अर्थ हो सकते हैं
यह आदमी पर निर्भर करता है कि
इसके कौन कैसा अर्थ लेता है
यदि मैं आपको कहूँ
आपको बाँस कर दूँगी
तो आप ही बताएँ कि
इसका क्या अर्थ लेंगे।"3

-निर्मला पुतुल

प्राकृतिक सौंदर्य में से बाँस एक महत्वपूर्ण वनस्पति है। एक दिन में 1 मीटर से भी अधिक तीव्र गति से बढ़ने वाला यह प्राकृतिक 'पेड़-पौधा' एक महत्वपूर्ण वनस्पति है। बाँस यह समूह वाचक शब्द है। अलग-

अलग जातियों के बाँस होते हैं। यह भारत, अमेरिका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया व यूरोप के कुछ क्षेत्रों में पाए जाते हैं। इसका उपयोग भी कई तरह की चीज़ें बनाने में किया जाता है। बाँस और आदिवासी का संबंध बहुत ही ज़मीनी रहा है। बाँस कहीं भी उग जाते हैं, चाहे जंगल हो या पहाड़। इसका उपयोग आदिवासी छप्पर में लगाने, तंबू का खूंटा बनाने, बाँसुरी बनाने, डंडा, पंखा, सूप-डालिया जैसे कई साधन बनाने के लिए करते हैं।

संताली भाषा की कवयित्री निर्मला पुतुल 'बाँस' कविता में बाँस का उपयोग बताती हैं कि बाँस को प्रकृति के हर एक हिस्से में देखा गया है। उसका उपयोग अनेक कामों के लिए किया जाता है। वह कभी तंबू का खूंटा बन जाता है तो कभी-कभी 'छप्पर' की आधारशिला। बाँस का उपयोग बांसुरी बनाने के लिए भी ज्यादा मात्रा में किया जाता है। बांसुरी बजाने वाले 'संगीत की प्रस्तुति' के लिए इसका भरपूर मात्रा में उपयोग करते हैं। जिससे संगीतकार का और सुनने वाले का मनोरंजन होता है।

देहाती क्षेत्रों में आज भी सूप-डालिया, दुरडी (भाकरी रखने का साधन) और हाथपंखा बनाने के लिए भी बांस का उपयोग होता है। बांस की विशेषता यह भी है कि वह बिना खाद-पानी का ही बड़ा हो जाता है। उसकी देखभाल करने की भी जरूरत नहीं है। जिसे जहाँ लगा दो वहीं उग जाता है। लेकिन बांस लगाने के लिए बुज़ुर्गों की एक कहावत हैं कि "कुंवारे लड़के-लड़कियों को इसे नहीं लगाना चाहिए नहीं तो हमेशा बाँझ ही रह जाएँगे।" बांस अपनी ऊंचाई का सभी को एहसास दिलाता है। समाज में बांस के संदर्भ में कई अर्थ एवं मुहावरें प्रचलित है। जिसके कई अर्थ होते हैं। वह अर्थ व्यक्ति पर निर्भर करता है। ऐसा ही चित्र कवि रामदयाल मुंडा ने 'अगर तुम पेड़ होते' कविता के माध्यम से स्पष्ट किया है-

अगर तुम पेड़ होते:

“अगर तुम पेड़ होते और मैं पंछी
तुम्हारे पेड़ पर ही मैं डेरा डालता
अगर तुम झाड़ी होते और मैं तीतर
तुम्हारी झाड़ी में ही मैं वास करता
हर सुबह सूर्योदय के साथ
गीतों से ही बात करता मैं
हर शाम सूर्यास्त के साथ
गायन से ही बतियाता मैं
धरती की गर्मी, आकाश का ताप
धरती की गर्मी से तुम्हें बचाता मैं
धरती की गर्मी, आकाश का ताप
आकाश के ताप से उन्हें छिपाता मैं।”4

-रामदयाल मुंडा

प्रकृति में हर एक जीव-जंतु, पेड़-पौधों का अपना महत्व है। इसी के कारण प्रकृति की सुंदरता की पहचान है। आदिवासी काव्य ने प्रकृति को संरक्षित करने के लिए अनेक मार्ग दिखाए हैं। एक मार्ग झारखंडी आदिवासी अस्मिता के कवि रामदयाल मुंडा अपनी कविता 'अगर तुम पेड़ होते' में बताते हैं। पर्यावरण में पेड़ों के होने से क्या कुछ नहीं होता है। अगर पृथ्वी पर वृक्ष नहीं होते तो आज दुनिया का रूप ही न दिखाई देता। पेड़ होने से क्या होता है। इसकी उपादेयता तो कवि रामदयाल मुंडा बताते हैं। कवि कहना चाहते हैं कि 'अगर तुम पेड़ होते तो मैं क्या होता' आज मनुष्य ही प्रकृति के विनाश का कारण बन चुका है। जिसका नतिया हम देख रहे हैं कि दिन-ब-दिन पर्यावरण का रूप बदल रहा है। वह रूप हमे यह संकेत दे रहा है कि प्रकृति ख़तरे में है। इन खतरों से निपटने के लिए पेड़-पौधों का पृथ्वीतल पर होना ही एकमात्र उपाय है। इसी सभी बातों का संदर्भ कवि अपनी कविता में देते हैं।

वे कहते हैं कि 'अगर तुम पेड़ होते और मैं पंछी' तो प्राकृतिक सौदर्य कितना अच्छा होता। वैसे तो आजकल वृक्षों पर दिख रहे पंछियों के घोसले भी नहीं दिख रहे हैं। पंछियों की संख्या भी कम हो गई है। पहले जो चिड़िया हमारे आँगन में दिखाई देती थी वह आज दिख नहीं रही। इसी का संदर्भ कवि यहाँ देते हैं। वे कहते हैं तुम पेड़ होते तो तुम्हारे पेड़ पर मैं पंछी बनकर एक सुंदर-सा घोसला बनाता और उस घोसले में मेरे नन्हे नन्हे बच्चों को बारिश से सुरक्षित रखता। अगर तुम झाड़ी होते तो मैं तीतर बनाकर तुम्हारी झाड़ियों में निवास करता नाचता-गाता और सुबह सूर्योदय होने के बाद मेरे चीव-चीव के स्वर में गीतों को गाता। जिससे मुझे ही नहीं बल्कि पृथ्वीतल पर हर एक जीव-जंतु सूर्यास्त होने का समय भी नहीं पता चलता। किंतु यह सब आनंद नहीं दिखाई दे रहा है। बस इतना ही नहीं मैं पेड़ होता तो धरती की गर्मी को बचाता सूरज के तेज़ किरणों से बचाता। गर्मी के दिनों में ही मनुष्य को पड़े होने का एहसास नजर आता है। किंतु कवि हर पल पेड़ के साथ जीवन को जीना चाहता है।

निष्कर्ष:

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि झारखंडी आदिवासी कवियों ने अपनी कविताओं में प्रकृति के प्रत्येक घटक की अपनी एक विशेषता बताई है। वे कवि प्रकृति के सानिध्य में रहकर अपना जीवनयापन करते हैं। इसी वजह से उन्होंने प्राकृतिक घटकों अत्यंत बारीकी से रेखांकित किया है। प्राकृतिक नरसंहार उसकी विशेषता एवं महत्त्व जैसे मुद्दों को कविता का केंद्र बनाया है।

संदर्भ:

1. बड़ाईक, सरिता. (2013). नन्हें सपनों का सुख. नई दिल्ली : रमणिका फाउंडेशन. पृ-32-33
2. टेटे, वंदना. (2015). कोनजोगा. राँची, झारखंड : प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन. पृ.15-16
3. पुतुल, निर्मला. (2014). बेघर सपने. पंचकूला, हरियाणा : आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड. पृ. 82
4. गुप्ता, रमणिका. (सं.). (2015). कलम को तीर होने दो (झारखंड के हिंदी आदिवासी कवि). नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ.49